REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF)
VOLUME - 7 | ISSUE - 4 | JANUARY - 2018

रामदरश मिश्र के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ

रविन्द्र कुमार
शोधार्थी , हिन्दी–विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र.

सारांश

डॉ. रामदरश मिश्र जी का जन्म मध्यवर्गीय परिवार में होने के कारण उन्होंने आर्थिक अभावों को सहा है। मिश्र जी संवेदनाक्षभ रचनाकार होने से उनको गरीबों के प्रति हमदर्दी रही है। उनके उपन्यासों के अधिकांश पात्र गरीबी एवं आर्थिक अभावों के कारण समय पर दवा–दारू न मिलने से या भूख से तड़पते हुए मरते हैं। रामदरश मिश्र दयनीय दशाओं का यथार्थ चिचांकन किया है। 'अर्थ' के अभाव में परिवार के सभी संकटों को उन्होंने बड़े मनोयोग से अंकित किया है। जिस चित्रांकन को स्वानुभावों की जोड़ है।

एम.ए. प्रथम वर्ष में पढ़ते समय मार्क्सवादी विचार प्रणाली से प्रभावित हुए। उनका मार्क्सवाद की ओर आकृष्ट होने के कारण शायद नागार्जुन जी से मुलाकात होना या फिर नागार्जुन जी का उनके यहां ठहरना आदि भी हो सकते हैं।

डॉ. रामदरश मिश्र ने अपने अधिकांश उपन्यासों में बेरोजगार युवकों की मानसिकता एवं महंगाई क्रूरता से पिसते हुए परिवार की

आज के अर्थ पिपासु युग में जहां–तहां आर्थिक शोषण हो रहा है इस महत्त्वपूर्ण पहलू को भी वे चित्रित करना नहीं भूले। आर्थिक यथार्थ के जमींदारी उन्मूलन, चकबन्दी, व्यापक अर्थभाव, रोजी–रोटी की खोज, वर्ग, बेरोजगारी, महंगारी तथा आर्थिक शोषण इन आयामों के आधार पर डॉ. रामदरश मिश्र के उपन्यासों का मूल्यांकन किया गया है।

सन् 1857 ई. के पश्चात् अंग्रेजों की शासन सत्ता भारत में अच्छे प्रकार से जम गई, जिसके फलस्वरूप सामन्ती व्यवस्था और संस्कृति का लोप हुआ। अंग्रेजों के शासनकाल में जमींदारी प्रथा को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ, परिणामस्वरूप आम किसान वर्ग दोनों और से लुटा जाने लगा। किसान का जीवन नाटकीट इसलिए हुआ कि, अकाल महामारी और जमींदारों के अत्याचार उन पर होते रहे। कृषि पर नये जमीदारों के अधिकार होने से किसान पूरी तरह निराधार हो गये।

हिन्दी के आंचलिक उपन्यास साहित्य में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कर्णधार एवं उत्पादन के मूल स्त्रोत भूमि के स्वामी जमींदारों की आर्थिक स्थिति एवं ग्रामीण जनता के साथ उनके व्यवहार का चित्रण मिलता है।

'पानी के प्राचीर' के जमींदार गजेन्द्रसिंह के सीनियर तहसीलदार मुंशी दुखीलाल ग्रामीण कृषकों से कर वसूल करने का कार्य करता है। हरिपुर की छावनी पर मुंशी दुखीलाल दो वर्ष का लगान प्राप्त करने के लिए अमानवीय व्यवहार करते हैं। उपन्यासकार डॉ. रामदरश मिश्र जी के शब्दों में– ''दरबार में बीसों किसान पकड़ कर लाये गये थे। सबके सब फटेहाल, नंगे बदन, धूल–धूसरित सर वाले। मुंशी जी सबको बारी–बारी से मुर्गा बनाकर पीट रहे थे, मैं सबकी नस पहचानता हूँ, तुम सब साले चोर हो। बिना मारे तो सुनते ही नहीं हो। लात के देवता हो बात से क्यों मानोगे? दो–दो साल की लगान बाकी है। सिपाहियों के जाने पर घर छोड़कर भाग जाते हो।''[1]

भारत सरकार द्वारा आयोजित विभिन्न भूमि–सुधार कार्यक्रमों में चकबन्दी वह कार्यक्रम है, जिसके माध्यम से बिखरे हुए खेतों का एक स्थल पर एकीकरण कर दिया जाता है। चकबन्दी का उद्देश्य सघन खेती का

विकास करना है, जिस कारण एक, कृष्ण एक समय पर श्रम से अधिक उत्पादन कर सकता है। चकबन्दी की प्रभाव छाया ग्रामों में कहीं सुखकर सिद्ध हुई तो कहीं दुखकर सिद्ध हुई। चालाक लोगों ने चकबन्दी अफसर को घूस दे–देकर गरीबों के अच्छे खेत अपने चक में जोड़ लिए जिससे गाँव में दुश्मनी हो गई। किसानों की जीविका का साधन खेत ही हैं और यदि अच्छे खेत दूसरे को चले गए थे उसकी आर्थिक स्थिति पर विपरीत परिणाम हो जाता है।

'जल टूटता हुआ' के तिवारीपुर गाँव में चकबन्दी के चक्रव्यूह का बड़ा अजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है। गाँव में भूपेन्द्रलाल ए.सी.ओ. ने अपने हंसमुख स्वभाव से सारे गाँव को खूब ठगा। गाँव के गंवार भी चुपके चुपके उसकी जेब भर आते। दीनदयाल ए.सी.ओ. भूपेन्द्रलाल का दलाल है। वह भूपेन्द्रलाल से कहता है– ''सरकार थोड़ा बहुत ख्याल कीजिए उस बाभन का नहीं तो मर जाएगा। कहकर दीनदयाल दो सौ रुपये की गड्डी साहब के हाथ में पकड़ा देते हैं।''[2]

व्यापक अर्थभाव का अभिप्राय धन के असमान वितरण से है। यह सत्य है कि समाज में कुछ लोगों के पास तो उनकी आवश्यकता से भी अधिक धन है, जबकि दूसरों के पास उनकी जरूरतें पूरा करने के लिए जितना धन अति आवश्यक है उतना भी नहीं है। वे गरीब लोग व्यापक अर्थभाव से ग्रस्त होकर बड़ी मुश्किल से जीवन जी रहे हैं। व्यक्ति का मूल्यांकन अर्थ के आधार पर आंका जाने लगा है। इस पर प्रकाश डालते हुए डॉ. अर्जुन चहानही ने लिखा है– ''आधुनिक कालीन समाज में सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु है– अर्थ। अर्थ जीवन को अर्थवान बनाता है और उसके अभाव से जीवन अर्थहीन हो जाता है। जिस व्यक्ति की आर्थिक स्थिति अच्छी हो, समाज में वही प्रतिष्ठित समझ लिया जाता है।''[3]

'पानी के प्राचीर' का पांडेपुर गाँव व्यापक अर्थाभाव में जी रहा है। गाँव के कई लोग होली खेलने निकले हैं। उनके वस्त्रों को देखकर पता चलता है कि वे कितने गरीब हैं।

अपनी व्यापक गरीबी के कारण सत्तर साल का बूढ़ा रामदीन होली के दिन अपनी भूख मिटाने के लिए चने खा रहा है। नीरू जब बूढ़े रामदीन को इस दयनीय दशा में देखता है तो जी मसोस कर रामदीन से कहता है– ''बाबा आज सारा गाँव राग–रंग में डूबा है। सब लोग पूरी सोहारी खा–पी रहे हैं और तुम इस बरगद के नीचे बैठे चने के दाने निखोर–निखोर कर खा रहे हो।''[4]

आधुनिक युग में शिक्षा का प्रचार–प्रसार बड़े पैमाने पर हुआ। शिक्षा रूपी मशीन ने दिनोंदिन बेरोजगारों का निर्माण किया। बेरोजगारी के कारण ग्राम में बसे युवक रोजी–रोटी की खोज करने शहर की और भागने लगे। गरीबी और शोषण की मार से प्रताड़ित लोग रोजगार के लिए अपने घरों बाहर निकलते हैं। किसी नगर में कारखानों, मिल, शैक्षणिक संस्था यासरकारी दफ्तर में रोजी–रोटी की तलाश करने हेतु कई बेरोजगार अपना भाग्य अजमाने आते हैं। कुछ अशिक्षिज्ञत लोग भी गाँव में रोजी रोटी का जुगाड़ न होने से शहर में मजदूर बनकर आ रहे हैं। शहर में भी उन्हें कई समस्याओं से जूझना पड़ता है। वे यदि गाँव में रहें तो उनका शोषण किसान सामन्ती जमींदार करते हैं। इसकी ओर ध्यान आकर्षित करते डॉ. रामदरश मिश्र लिखते हैं–

''किसान शोषण की पीड़ा से टूटकर मजदूर होते गये और अन्ततः गाँवों से शहरों की ओर प्रस्थान करने लगे।''[5]

'सुखता हुआ तालाब' का शिकारीपुरी गाँव रोजी रोटी की खोज से त्रस्त है जिनके यहां के लोग बाहर नौकरी–चाकरी कर रहे हैं, उनके परिवार किस तरह चल रहे हैं। शिवलाल के यहां रोजी–रोटी पाने के लिए चमारिन चेनइया की मां से अपनी जवान बेटी को धकेल दिया है। जिसके कारण चेनइया को और उसकी मां को रोज काम मिल रहा है। चेनइया शिवलाल से गर्भवती रह जाती है, चेनइया मां को मन ही मन गाली देती हुई कहती है–

''मेरी माई है न, वह बड़ी हरजाई है।
सब उसी का किया हुआ है।''[6]

आधुकिन युग में समजा जीवन में जागरूकता आई है। इसी जागरूकता के कारण शिक्षा का प्रचार–प्रसार बड़े पैमाने पर होने लगा है। जितने युवक पढ़ रहे हैं उतनी संख्या में नौकरियों का जुगाड़ नहीं हो पा रहा है। फलतः वे बेरोजगार होते जा रहे हैं। डॉ. अर्जुन चहाणजी लिखते हैं– ''शिक्षा रूपी मशीन ने दिनोंदिन बेरोजगारों का निर्माण किया। सफलता कुछ ही लोगों के हाथ आई। बेरोजगारी की बाढ़ आई और

इसमें मध्यवर्ग बहने–डूबने लगा। वर्तमान शिक्षा की यह विडम्बना है कि पुस्तकीय शिक्षा आदर्शपरक तथा नैतिक मूल्यों पर आधारित है, जिसका व्यवहार में मेल नहीं हो पाता। पुस्तकीय ज्ञान के सहारे जीवन की विसंगतियों को नष्ट करना संभव नहीं हो पाता। पुस्तकीय ज्ञान के सहारे जीवन की विसंगतियों को नष्ट करना सम्भव नहीं होता। शिक्षित युवक जब जीवन संग्राम में कूदता है तभी दुनिया की बनावट और जटिलता जान पाता है।''[7]

अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए हमारे देश व्यवसायों को नष्ट करके ग्रामीण युवकों को बेरोजगार बनाने में अप्रत्यक्ष रूप से कार्य किया। उनकी प्रचलित शिक्षा पद्धति भी सस्ते क्लर्कों की अपेक्षा कुछ नहीं निर्मित करती। इस शिक्षा पद्धति में परिवर्तन की आवश्यकता है। बेरोजगारी को समाप्त करने के कई उपाय हो सकते हैं। प्रथम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तो यह है कि शिक्षा को रोजगार से जोड़ा जाए। छोटे उद्योगों को बढ़ावा दिया जाए।

महंगाई की बीमारी से आज सारा संसार ग्रस्त है। भारत में इसका असर बड़ी बुरी तरह महसूस किया जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों में हमारे यहां महंगाई बड़ी तेजी से बढ़ी है। आवश्यक वस्तुओं की कीमतें आकाश को छूने लगी हैं। लोगों का जीवन निर्वाह करना दिनोंदिन बहुत कठिन होता जा रहा है। भारत में चालीस प्रतिशत जनता गरीबी की सीमा रेखा के नीचे आती है। निम्न और मध्यवर्ग इस महंगाई के कारण त्रस्त हैं। एक बार किसी वस्तुओं के भाव बढ़ जाने के बाद उतरने के नाम नहीं लेते। ऐसे देखकर लगता है कि न जाने ये कीमतें कहां जाकर रुकेंगी। महंगाई को हम राष्ट्रीय संकट कहें तो अनुचित न होगा। आज हम देख रहे हैं कि महंगाई और खच्र के दो पाटों में हर व्यक्ति पिसता हुआ नजर आ रहा है। गाँव के मजदूर तो इस कमरतोड़ महंगाई से अत्यधिक परेशान हैं। कुछ सुमेस्सर बनिया के यहां से उधार की बात सोच रहे हैं किन्तु बनिया भी अब उधार नहीं देता है। महंगाई के कारण पांडेपुर गाँव के उत्सवों, त्यौहारों के भी रंग फीके पड़ते जा रहे हैं।

''नागपंचमी आ गयी। खेत बह गये, घर गिर गये, चारों ओर से पानी गाँव को घेरे हुए है। घर में कुछ खाने को नहीं है और यह नागपंचमी आ गयी। लड़के मेंहदी रचने के लिए आफत कर रहे हैं परन्तु मेंहदी कोई कहां से लाये।''[8]

निष्कर्ष –

डॉ. रामदरश मिश्र के उपन्यास साहित्य में भारतीय समाज में चल रहे आर्थिक शोषण की प्रवृत्तियों के साथ–साथ निर्धरनता, निर्धनता से उपजी इतर समस्याएं भोजन, आवास, बेरोजगारी, महंगाई, महंगाई की क्रूरता में पिसता हुआ मध्यवर्गीयों की संग्राम को भी रेखांकित किया है। चकबन्दी के कारण गाँव में फैली आपसी–दुश्मनी, जमींदारी उन्मूलन के परिणामस्वरूप नया सामन्तों का जन्म, सामन्तों की अर्थ पिसाच वृत्ति द्वारा किया जाने वाला अर्थ–शोषण आदि विविध आर्थिक आयामों को बड़े ही मर्मस्पर्शी ढंग से मिश्र जी व्यक्त करने में सफल रहे हैं। डॉ. रामदरश मिश्र के समग्र उपन्यासों का मूल्यांकन करते समय प्रखर रूप से यह दृष्टिगोचर होता है कि वे मार्क्सवाद की विचार प्रणाली से प्रभावित हैं, किन्तु मार्क्सवादियों की तरह लाल झंड़ा लेकर घूमने वालों में नहीं हैं।

संदर्भ –

1. पानी के प्राचीर, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 208
2. जल टूटता हुआ, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 214
3. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन, डॉ. अर्जुन चहाण, पृ. 108
4. पानी के प्राचीर, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 22
5. कथाकार रामदरश मिश्र, डॉ. सूर्यदीन यादव, पृ. 184
6. सूखता हुआ तालाब, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 102–103
7. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों की शिल्पविधि, डॉ. अर्जुन चहाण, पृ. 118
8. पानी के प्राचीर, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 184